सन्दर्भः–

1. प्रसन्नराघवः – 1/22
2. ऋग्वेद्
3. हितोपदेषः – मित्रलाभः 71
4. रघुवंशः– 1/1
5. रघु0 – 6/67
6. रघु0 – 2/2
7. अभिज्ञान – 1/22
8. अभिज्ञान – 2/10
9. हर्षचरितम् – 1/16
10. कुवलयानन्द (अप्पयदीक्षित)– 164

****

नागार्जुनः की दृष्टि में नारी की शोचनीय स्थिति

डॉ0 अनिता कुमारी, सिवान *

भारतीय संस्कृति, समाज तथा साहित्य में नारी का स्थान बड़ा ही सम्माननीय माना गया है। प्राचीन साहित्य में इसके अनेक उदाहरणों के होते हुए भी वास्तविक रूप से आज के भारतीय समाज में पुरूष की सहधार्मिणी होते हुए भी वह पति की अनुगामिनी और उसकी परछाई मात्र बन कर रह गई है। उसकी दुर्दशा की ओर समाज सुधारकों एवं देश के नीति निर्धारकों का ध्यान शायद ही कभी गया हो। पुरूष को बहुविवाह, सौंदर्य लोलुपता की ताक झांक, परकीया प्रेम आदि सब बातों के लिए खुली छूट दे रखी है पुरूष प्रधान समाज ने, किन्तु इसके विपरीत भारतीय नारी आज भी अशिक्षा अन्ध विश्वास तथा कुल मर्यादा के नाम पर जीवन के हर क्षेत्र में आज भी पिछ़डी हुई, दकियानूसी रूढ़ियों के बन्धक में जकड़ी हुई पिंजरबद्ध पक्षिणी की भांति छटपटा रही है। नागार्जुन ने पुरूष की अर्द्धांगिनी और जननी की पीड़ा को मिथिलॉचल में बहुत निकट से देखा है। उन्हे पौराणिक पात्रों में शबरी, अहल्या, सीता, सूपनखा, और रेणुका की दुर्दशा, उन पर पुरूष समाज द्वारा ढाए गए जुल्मों की याद हैं, तो साथ ही बहुविवाद, सती प्रथा और दहेज की बलिवेदी पर चढ़ती आज के युग की नवयुवतियों की करूण कथा भी कहीं गहरे में मर्मान्तक वेदना पहुँचाती हैं। माता पिता और समाज द्वारा धर्म के नाम पर बलिदान की बकरी बननेवाली नवयुवती को भिक्षुणी के वेश में देखकर उनका मन उसके हृदयगत भावों से मानों तादात्मय स्थापित कराता हैं। तब नागार्जुन मनोवैज्ञानिक अन्दाज में उसकी मनोव्यथा का शब्द चित्र बड़े ही प्रभावशाली ढ़ंग से प्रस्तुत करते है।

महायान हीन यान सभी मैं जान गई
किन्तु नहीं जान सकी–
मानव का मानवी का सहजयान क्या है!
x x x x x x
किन्तु कौन पूछेगा मुझे कल परसों?
गलित होगा यौवन जब!

पलित होंगे केश जब!
किसी की दृष्टि क्या मुझे पर उठेगी?
भगवान अमिताभ सहचर मैं चाहती
चहती अवलम्ब, चाहती सहारा
देकर तिलांजलि मिथ्या संकोच को
हृदय की बातलों कहती हूं आज मैं–
नारी के अन्तर की पीड़ा और वह भी एक भिक्षुणी के मुख से।

साम्प्रदायिक तनाव और विवाद के तूल की आड़ लेकर अच्छे–अच्छे धैर्यवान और साहसी भी इतने स्पष्ट और बेबाक शब्दों में कहने से कन्नी ही काटते नजर आते हैं। समाज के किस व्यक्ति से भिक्षुणी जीवन ढ़ोने को विवश इन युवतियो का दारूण दुख छिपा है। कानूनी दृष्टिकोण से बहुविवाह प्रथा हिन्दु समाज में अपराध गिने जाने के बावजूद अनेक स्थानों पर विशेषतः बिहार के मैथिली ब्राह्मण समाज में एक प्रचलित पुरातन परम्परा के रूप में विद्यमान है। निर्धनता के कारण अनेक युवतियाँ अपने पिता की आयु के पुरूषों से न केवल विवाह करने के लिए बाध्य होती हैं, बल्कि आजवीन पर्दे के भीतर कैद ड्योढ़ी लाघने को भी तरस कर रह जाती है। वे ऐसे बूढ़े पुरूषो की पत्नी बना दी जाती हैं जिसकी दो–दो चार–चार पत्नियॉ पहले से मौजूद रहती हैं। इन युवतियों के अरमान भीतर ही भीतर घुटकर दम तोड़ देते हैं। उन्होने नारी मुक्ति आन्दोलन का तो शायद कभी नाम भी नहीं सुना। वे इसी को अपना प्रारब्ध मानकर असाहाय एवं अबला की दयनीय की दयनीय जिन्दगी जीने को मजबूर है। समाज–सुधारकों की दृष्टि भी इन असहाय नारियों के प्रति या तो उपेक्षा पूर्ण है। अथवा वे इस ओर से बिल्कुल बेखबर है। नागार्जुन ने बहु विवाह प्रथा से त्रस्त नारी समाज की इस दुर्दशा का बड़ाऋा ही मार्मिक एवं करूण दृश्य अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। ऐसी स्त्रियों से साहस का संचार करने की भरपूर चेष्टा करते हुए उन्होंने इस घिनौनी प्रथा द्वारा चलने वाले शोषण का पूर्ण उन्मूलन करने के लिए उनका अवाहन भी किया है। इस संदर्भ में उनकी प्रसिद्ध कविता तालाब की मछलियॉ की कुद पंक्तियां उल्लेखनीय है–

दो टूट दॉतो वाले इन भद्र अधेड़ महानुभाव
(मथुरा पाठक) की
मधुर तृतीया भार्या
प्राणों से भी प्यारी
वह कुलीन मैथिल की कन्या
फिर फिर सुनने लगी वही आवाज.....

हम भी मछली, तुम भी मछली
दोनों ही उपभोग वस्तु हैं
ज्ञाता स्वाद सुधीजन, सजनी हम दोनों को
अनुपम बतलाते हैं–
वनिता धर पल्लव में किवा
जंबीरी रस सिक्त मत्स्य खण्डों में
कहीं नहीं अन्यत्र
इन्हीं में
मिलती आई है अमृत द्रव की अशेष परितृप्ति

कुल मर्यादा की बलि वेदी पर अपनी समस्त अभिलाषाओं और यौवनोचित आकांक्षाओं की बलि देकर समाज के इन नर–पिशाचों की हवस को शान्त करने की चेष्टा में पीढ़ीदर पीढ़ी घुल–घुल कर और घुट घुट कर जीवन–मरण के बीच त्रिशंकु बनी भारतीय नारी आखिर कब तक यह सब बर्दाशत करती रहेगी? पुरूष प्रधान समाज द्वारा उसने ऊपर थोपी गई वर्जनाऍ जिन्हे उसके पायल समझ कर स्वीकार किया था न जाने कब उसके अज्ञान, भोलेपन और सरलता के कारण बेड़ियॉ बनकर उसकी प्रगति की राह में सशक्त बाधा बन गई। सम्पूर्ण विश्व में जब नारी–मुक्ति की चर्चा और प्रयास जोरों से चल रहे है, भारतीय नारी को भी अस्वाभाविक एवं अमानवीय बन्धनों से मुक्त होने के लिए प्रेरणा देना प्रत्येक प्रबुद्ध भारतीय नागरिक का कर्तव्य है। आवश्यकता है, उसमें आशा, आकांक्षा एंव विश्वास उत्पन्न करने की। एक बार यदि उसमें मुक्ति की आकांक्षा जागृत हो जाए और सफलता के प्रति वह आश्वस्त महसूस करने लगे तो कोई वजह नही कि वह समाज में अपने खोए सम्मान को पुनः प्राप्त करने के लिए प्राण–पण से जुट जाय। नागार्जुन ने त्रस्त भारतीय नारी को मछली के प्रतीक रूप में प्रस्तुत कर उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा की पुर्नस्थापना के प्रति आशान्ति किया है, इसे इन पंक्तियों में सुना जा सकता है।

टूट रहे हैं अन्तः पुर के ढॉचे
आज या कि कल
तुम भी तो निकलेगी बाहर
हवेलियों से डेवढ़ियों से
फिर जनपद के खण्ड नरक ये मिट जाऍगें।
शब्दकोश को छोड़ कहीं भी
नहीं असूर्यम्पश्या का अस्तित्व रहेगा
औरतदारी रह न जाएगी

भारतीय नारी को स्वयं अपने पति का विश्वास अर्जित करने में भी कितनी मर्मान्तक पीड़ा के दौर से गुजरना पड़ता है और जिन्दगी की इस जद्दोजहद में वह किस प्रकार उपहास की पात्र बनकर आजीवन तड़पती है, इस तथ्य को कवि ने अपनी कविता अहल्या में शब्दांकित किया है। अहल्या अनिन्दय सौंदर्य ही उसके जीवन में कडुवाहट पैदा करने वाला तत्व सिद्ध होता है–

नाहक ही
उतना अधिक रूप दिया
विधाता ने
गौतम की शकल बना के
सचमुच क्या इन्द्र ही आया था?
समान आकृति वाले
दो पुरूषों की छाया में पथरा गई बेचारी!

संदर्भ सूचिः–

1. ऋतुराज वसन्त
2. तलाब की मछलियाऋतुराज वसन्त
3. तलाब की मछलियाँ
4. कविता–अहल्या
5. विश्वम्भर नाथ मानव नयी कविता नये कवि

****